भारत में ग्रामीण ऋणग्रस्तता: कारण, परिणाम एवं निवारण के उपाय

"म.प्र. के ग्रामीण क्षेत्र के विशेष संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन"

डॉ. देवी नारायण यादव,

प्राचार्य एवं सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र, शासकीय महाविद्यालय खातेगाँव, जिला–देवास (म.प्र.)

शोध सारांश

भारतवर्ष को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं एक शहरों व दूसरा गाँवों वाला भारत। आज हम बात करेंगे ग्रामीण भारत की जिसकी आबादी सम्पूर्ण आबादी का लगभग 70 प्रतिशत आज भी गॉवों में निवास करती है। आदिकाल से लेकर वर्तमान तक मानव नित नई समस्याओं से जूझता आया है। उन्हीं में से एक भयावह समस्या ऋणग्रस्तता है, इस समस्या ने केवल हमारा प्रदेश ही नहीं अपितु पूरा देश ग्रसित है। अध्ययन का उद्देष्य ग्रामीण भारत में ग्रामीणों की ऋणग्रस्तता के कारण का पता लगाना है। अध्ययन की प्रासंगिकता इस अध्ययन में यह पता लगाने में आसानी होगी कि ग्रामीणों की वर्तमान में ऋणग्रस्तता की स्थिति क्या है? ताकि इस समस्या को दूर करने के लिये सरकार द्वारा नीतियों एवं योजनाओं का निर्माण किया जा सके।

हमारे यहां किसानों की ऋणग्रस्तता एक ऐतिहासिक प्रघटना है। ऋणग्रस्तता को लेकर एक मुहावरा प्रचलित है– भारत का किसान कर्जे में पैदा होता है और कर्जे में ही मरता है। बाप के कर्ज को बेटा चुकाता है और कर्जे चुकाने का यह सिलसिला पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है। ऋणग्रस्तता का संबंध व्यवसाय और व्यापारी के साथ जुड़ा हुआ है। कृषि का धंधा ऐसा है जिस पर व्यक्ति का कोई नियंत्रण नहीं होता है। इस व्यवसाय में व्यक्ति के सभी अनुमान असफल हो जाते है। इस दृष्टि से किसान की ऋणग्रस्तता सबसे अधिक तीव्र है। क्योंकि किसान वर्षा पर निर्भर रहता है और यदि सूखा पड जाता है, यह कर्जे का प्रारंभ है और इसलिये आये दिन किसान को कर्जे की आवश्यकता होती है। हालांकि ग्रामीण लोग गैर उत्पादक उद्दश्यों जैसे कि परिवारिक जरूरतों को पूरा करने, सामाजिक कार्य (विवाह, जन्म, मृत्यु से संबंधित) मुकदमें बाजी आदि के लिये भी कर्ज लेते हैं।

कुल मिलाकर ग्रामीण ऋणग्रस्तता की समस्या ग्रामीण गरीबी के बड़े मुद्दे से जुडी हुई है। ग्रामीणों की आय बढ़ाने के लिये गरीबी उन्मुलन के उपाय शासन द्वारा कई योजना बनाकर लागू की जाती है। स्थानीय, सामाजिक और आर्थिक संसाधनों को जुटाना नई कृषि रणनीति के लाभों का समान वितरण और पर्याप्त संख्या में सहकारी समितियों और वाणिज्यिक बैंकों की स्थापना से ग्रामीण सामाजिक मैट्रिक्स से ग्रामीण ऋणग्रस्तता की भयावता को कम करने में काफी मदद मिलेगी।

प्रस्तुत शोध–आलेख भारत में ऋणग्रस्तता की समस्या को दूर करने हेतु शासन द्वारा किये गये प्रयास की अब तक की यात्रा के साथ–साथ 21 वीं सदी के भारतीय समाजशास्त्र के शिक्षण और शोध की दशा व दिशा को रेखांकित करने को एक विनम्र प्रयास है।

कुंजी:– *ऋणग्रस्तता, कृषक, ग्रामीण, कर्ज, शोषण, वर्षा।*

प्रस्तावना

हमारे देश की लगभग तीन चौथाई आबादी गाँवों में रहती है। गाँव के लोग मुख्य रुप से खेती करते हैं। इनमें कई लोगों के पास सैकड़ों बीघा खेत है तो कइयों के पास महज अपने परिवार का गुजर बसर करने भर के लिए अन्न उपजा पाने भर के खेत हैं। इनमें कई ऐसे भी है जिनके पास बिल्कुल खेत नहीं है और वे बड़े किसानों के खेतों में मजदूरी करके पेट पालते हैं या उनसे बटाई पर खेत लेकर खेती करते हैं। इनके अलावा वहां ऐसे भी अनेक लोग है जिनका मुख्य पेशा खेती नहीं है। इनमें बुनकर,दर्जी, बढ़ई, पुरोहित, दुकानदार आदि है। खेती से जुड़ी समस्याओं के साथ–साथ गांव में रहने वाले अलग–अलग जातियों और वर्गों के लोगों की अपनी अलग–अलग समस्याएं हैं। किसी भी समाज की तरह भारतीय समाज भी तनाव में है। ये तनाव सामाजिक व्यवस्था को चुनौती देते हैं और प्रत्येक समाज अपनी परंपरा और अनुभव के आधार पर इन तनावों का मुकाबला करता है। भारतीय समाज की ग्रामीण संरचना में प्रारंभ से लेकर आज तक कई चुनौतियां, संघर्ष और तनाव आए हैं। अभी गांवों में तनाव का कारण अधुनिकीकरण का प्रवेश हैं। जब व्यक्ति समाज द्वारा निर्धारित मानदण्डों और मूल्यों की अवहेलना करता है तब चलकर सामाजिक समस्याएं पैदा होती है।

ग्रामीण समाज वर्तमान में अनेक सामाजिक समस्याओं से जूझ रहा है। यहां न केवल ऋण–ग्रस्तता की समस्या है, बल्कि निर्धनता, बंधुआ श्रमिकों की समस्या, और बरोजगारी भी मुख्य है। गांधी जी ने कहा था कि भारत गांवों में बसता है। यदि भारत के गांव समृद्ध होंगे तो निश्चित रुप से भारत भी समृद्ध होगा। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि गांवों में ऋणग्रस्तता के कारण जाने और ऋणग्रस्तता के निवारण करने का प्रयास करें। भारतीय गांवों में ऋणग्रस्तता के बहुत कारण है, जिनकी वजह से ऋणग्रस्तता ने आज भी अपने पैर पसार रखे हैं। ऋणग्रस्तता यद्यपि अपने मूल में व्यक्ति की आर्थिक स्थिति है, लेकिन इसके सामाजिक आयाम भी है। ऋण से दबे हुए व्यक्ति की समाज में प्रतिष्ठा निम्न होती है। उसे पग–पग पर सामाजिक आपदाओं का मुकाबला करना होता है। हमारे यहां किसानों की ऋणग्रस्तता एक ऐतिहासिक प्रघटना है। यहां जब कभी अकाल पड़े हैं और उनकी पड़ताल के लिए आयोग बने हैं तब बराबर ऋणग्रस्तता को कोशा गया है। ऋणग्रस्तता को लेकर एक मुहावरा प्रचलित है–भारत का किसान कर्जे में पैदा होता है और कर्जे में ही मरता है। बाप के कर्जे को बेटा चुकाता है और कर्जे चुकाने का यह सिलसिला पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है। वैसे ऋणग्रस्तता का संबंध व्यवसाय और व्यापारी के साथ जुड़ा हुआ हैं। कुछ धंधे ऐसे है जिन पर व्यक्ति का कोई नियंत्रण नहीं होता। इन व्यवसायों में व्यक्ति के सभी अनुमान असफल हो जाते हैं। इस दृष्टि के किसान की ऋणग्रस्तता सबसे अधिक तीव्र है। किसान बारिश पर निर्भर रहता है और यदि सूखा पड़ जाता है, बाढ आ जाती है और समय पर बारिश नहीं होती तब फसल बिगड़ जाती है। यह कर्जे का प्रारंभ है। स्थिति यह है कि देश में सिंचाई की सुविधाओं के होते हुए भी बहुत बडी कृषि भूमि बारिश से ही पैदावार देती है और इसलिए आये दिन किसान को कर्जे की आवश्यकता रहती है।

सामान्यतः कर्ज के स्त्रोत कई तरह के हैं। व्यक्ति अपने नातेदार से कर्ज ले सकता है। वह सहकारी समिति से भी कर्ज ले सकता है। इन दोनों प्रकार के कर्ज के स्रोत में गांव के साहूकार का कर्ज अधिक सुविधाजनक समझा

जाता है। गांव में साहूकार को हमेशा एक शोषक के रुप मे चित्रित किया जाता है। यह सही है कि उसके ब्याज का दर बहुत ऊंचा होता है। यह भी सही है कि वह मनमाने ढंग से वस्तुओं को बेचता है। लेकिन ऋणग्रस्त व्यक्ति का बहुत बड़ा आधार साहूकार ही होता है। अन्य स्रोतों से जो ऋण मिलता है। वह प्रायः उत्पादक ऋण होता है। लेकिन किसान को सामाजिक कार्यों के लिए भी ऋण लेना पड़ता है। किसी की शादी है तो किसी की मृत्यु ऋण तो लेना ही पड़ता है। कभी आपात स्थिति आती है– बीमारी और मौत। इन अवसरों पर साहूकार ही कर्ज देता है।

ऋणग्रस्तता के और भी कई कारण है इना कारणों में महत्वपूर्ण कारक आर्थिक है। गांव में उपभोक्तावाद बढ़ गया है। मध्यम वर्ग को तो अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जो नित नई होती है, बराबर कर्ज लेना होता है। कई बार उत्पादक कार्यों के लिए भी ऋण की आवश्यकता होती है सामाजिक आवश्यकताओं में शादी–ब्याह और मृत्यु सम्मिलित है।

ऋणग्रस्तता के निवारण के लिए सरकार ने कई योजनाएं बनाई हैं। उत्पादक और उपभोक्ता के बीच में साहूकार और व्यापारी होता है इन बिचौलियों की भूमिका को न्यूनतम करने के लिए सहाकारी समितियों और सहकारी बैंकों का सरकार ने जाल बिछा दिया है। गांव से लेकर महानगर तक सहकारी क्षेत्र ऋणग्रस्तता से छुटकारा देता है। कुछ राज्यों में तो सहकारी क्षेत्र बड़ी सफलतापूर्वक काम कर रहा है।

निवारण के ये सब प्रयास महत्वपूर्ण है लेकिन यह बात बहुत स्पष्ट हो जानी चाहिए कि ऋणग्रस्तता को यदि लंबे समय तक चलने दिया तो ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर इस प्रथा का बड़ा घातक प्रभाव होगा। ऋणग्रस्तता आगे चलकर बंधुआ मजदूरी में बदल जाती है। रोजगार के अवसर आज की अर्थव्यवस्था में न्यूनतम हो गये हैं। ऐसी अवस्था में जीवन निर्वाह करने के लिए किसान को ऋण लेना पड़ता है और मार्क्सवादी जिसे गैर बराबर विनिमय कहते हैं, उसमें गांव का किसान ऋण के बदले में बंधुआ मजदूर बन जाता है। कृषक समाज को बंधुआ की स्थिति से बचाने के लिए ऋणग्रस्तता को दूर करना आज की बहुत बड़ी आवश्यकता है। बंधुआ मजदूरी के पीछे प्रभावशाली कारक ऋणग्रस्तता है और इसलिए इसे तत्काल दूर करना आवश्यक है।

पूर्ववर्ती अध्ययन

1. डॉ. बी.वी. नारायण स्वामी नायडू के मद्रास में ग्रामीण ऋणग्रस्तता संबंधी जांच जो ग्रामीण ऋणग्रस्तता के संबंध में अर्थशास्त्री की जांच रिपार्ट (गवर्नमेंट प्रेस, मद्रास 1946) के नाम से प्रकाशित हुई है, मुख्य अध्ययन–अनुसंधान है जो युद्ध काल की इस समस्या पर प्रकाश डालती है।
2. 1941 तथा 1945 में मैसूर के 258 चुने हुए ग्रामों का सर्वेक्षण एवं पुनः सर्वेक्षण इस समस्या के संबंध में जानकारी प्रदान करने वाला दूसरा स्रोत्र है।
3. अकाल जांच आयोग ने अपने अंतिम प्रतिवेदन अथवा रिपोर्ट में युद्ध काल में ऋणग्रस्तता की समस्या को समझाने के लिये सामग्री प्रस्तुत की है।
4. डॉ. जी.डी. अग्रवाल द्वारा उत्तरप्रदेश के 14 ग्रामों के 1038 परिवारों का अध्ययन।
5. डॉ. सी.एच.शाह द्वारा युद्ध के कृषि पर संघात की जांच।
6. बम्बई, कर्नाटक तथा दक्षिण प्रदेशों में किये गये अनुसंधान तथा ऐसे ही देश के विभिन्न भागों में संगठित व्यक्तिगत अध्ययन भी भारत में ग्रामीण ऋणग्रस्तता की प्रवृत्ति का अनुमान लगाने के लिये सामग्री उपलब्ध कराते हैं।

7. कृषि संबंधी श्रमिक जांच समितियों को उनके 1951–52 तथा 1956–57 के अनुसंधान एवं पुनः अनुसंधान पर आधारित दोनों प्रतिवेदन ग्रामीण ऋणग्रस्तता तथा विशेष कृषि संबंधी श्रमिकों की ऋणग्रस्तता के संबंध में बहुमूल्य सामग्री प्रस्तुत करते हैं।

उद्देश्य

1. ऋणग्रस्तता की अवधारणा को समझ लेना।
2. ऋणग्रस्तता की विशेषताओं/कारणों का अध्ययन करना।
3. ऋणग्रस्तता हेतु साहूकारों एवं सहकारी सोसाईटियों की भूमिका को स्पष्ट करना।

उपकल्पनाएं

1. साहूकारों पर निर्भरता कम कर लोगों ने अपनी पहचान अलग बनाई है।
2. ऋणग्रस्त लोगों की विशेषताएं/कारण स्पष्ट दिखाई देते हैं।
3. सहकारी सोसाईटी एवं बैंकिंग सेक्टर द्वारा ग्रामीण ऋण सहायता से साहूकारों के चुंगल से बहुत हद तक छुटकारा दिलाया है।

शोध पद्धति

प्रस्तुत शोध निबंध को लिखने के लिए द्वितीयक डाटा संग्रह विधि को अपनाया गया है। इसमें संदर्भ–ग्रंथ, पाठ्यक्रम पुस्तक, पत्रिकाएं, समाचार–पत्र और इंटरनेट की जानकारी शामिल है। इस जानकारी के आधार पर शोध–पत्र का वर्णनात्मक विश्लेषण किया गया है।

ऋणग्रस्तता का अर्थ

ऋणग्रस्तता का अर्थ है किसी अन्य पक्ष को धन देने की बाध्यता। भारत में गरीब किसान और दिहाड़ी मजदूर आदि जब ऋण चुकाने और उसे जमा करने में असमर्थ होते हैं तो ग्रामीण ऋणग्रस्तता की समस्या होती है।

भारत में ऋणग्रस्तता के कारण

1. **गरीबी** :– भारतीय किसान बहुत गरीब है और उनके पास अपना कर्ज चुकाने या अपनी जमीन पर सुधार करने के लिए कोई पिछली बचत नहीं है। इस प्रकार,गरीबी किसानों को अपना कर्ज बढ़ाने के लिए मजबूर करती हैं।
2. **दोषपूर्ण कृषि संरचना** :– ग्रामीण ऋणग्रस्तता दोषपूर्ण कृषि संरचना के कारण भी होती है जिसमें दोषपूर्ण भूमि स्वामित्व प्रणाली, पुरानी तकनीकों को अपनाना, भूमि पर बढ़ता दबाव, दोषपूर्ण विपणन, आय के वैकल्पित स्रोतों की अनुपस्थिति आदि शामिल हैं।
3. **कोई पिछली बचत नहीं** :– भारतीय किसानों में अपनी भूमि और कृषि कार्य में सुधार के लिए धन उधार लेने की प्रवृत्ति होती हैं, हालांकि उनके पास कोई पिछली बचत नहीं होती है।
4. **अनुत्पादक व्ययः**– भारतीय किसान शादी और अन्य सामाजिक समारोहों जैसे अनुत्पादक उद्देश्यों के लिए भारी खर्च करने के आदी हैं। इन सबके कारण देश के किसानों पर ऋणग्रस्तता बढ़नी तय है।
5. **पैतृक ऋण** :– भारतीय किसानों को अपने पिता का ऋण विरासत में मिलता है।
6. **साहूकारों के अनाचार** :– भारत में साहूकार भी देश में बढ़ती ग्रामीण ऋणग्रस्तता के लिए बहुत जिम्मेदार है क्योंकि वे भारतीय किसानों को उधार

लेने, बहुत अधिक ब्याज दर वसूलने और उनके खातों में हेरफेर करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

7. **अनिश्चित् मानसून** :– भारतीय कृषि बहुत हद तक मानसून पर निर्भर है। लगभग 65 प्रतिशत कृषि कार्य वर्षा आधारित है क्योंकि बारिस सबसे अनिश्चित है, इसलिये कृषि कार्य मानसून में एक जुआ बन गया है।
8. **किसानों की निरक्षरता** :– अधिकांश भारतीय किसान अशिक्षित है। बेईमान साहूकार या महाजन किसानों की इस कमजोरी का उपयोग कर्ज का दुष्चक्र बनाने के लिए कर रहे हैं।
9. **विखण्डन** :– भूमि जोत के उप–विभाजन और विखण्डन की प्रवृत्ति बढ़ रही है जिसके परिणामस्वरूप भारतीय किसानों की आय का स्तर खराब हो गया है। ऐसी कम आय किसानों को बढ़ते ऋणग्रस्तता की ओर मजबूर करती है।
10. **मुकदमेबाजी** :– भारतीय किसानों में मुकदमेबाजी की प्रवृत्ति बढ़ रही है जिससे देश में ऋणग्रस्तता की समस्या बढ़ गई है।
11. **दोषपूर्ण विपणन** :– भारत में कृषि विपणन बहुत दोषपूर्ण है। इससे किसानों को कभी भी उनके उत्पादों के लिए लाभकारी मूल्य नहीं मिल पाता है और कभी–कभी उन्हें मजबूरी में मजबूरन बिक्री करनी पड़ती है। ऐसी स्थिति भारतीय किसानों में बढ़ती गरीबी और ऋणग्रस्तता के लिए अत्यधिक जिम्मेदार है।
12. **प्राकृतिक आपदाएं** :– बाढ़ और सूखे जैसी प्राकृतिक आपदाएं और कृषि का पिछड़ापन भी देश में बढ़ती ग्रामीण ऋणग्रस्तता के लिए व्यापक रूप से जिम्मेदार है।
13. **सामाजिक और धार्मिक आवश्यकताएं** :– ग्रामीण क्षेत्र में सामाजिक और धार्मिक कार्यों हेतु ऋण लेना पड़ता है।
14. **जमीन के प्रति जुनून** :– ग्रामीणों का परम्परागत रूप से जमीन के प्रति जुनून है।
15. **छोटे आकार की जोत** :– भारत में अधिकांश किसानों के पास छोटे आकार की जोत होने से अपनी आवश्यकता की पूर्ति करने में समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
16. **उच्च जीवन स्तर का आकर्षण** :– आधुनिकता के इस दौर में ग्रामीण क्षेत्र में भी संसाधनों को प्राप्त करने के लिए होड़–सी मची हुई है। इसलिए अनावश्यक ही ऋण लेना पड़ता है।
17. **शराब पीने की लत** :– पाश्चात्य एवं आधुनिकता के कारण शहरीकरण का प्रभाव ग्रामीण क्षेत्र में भी देखने को मिल रहा है। ग्रामीणों द्वारा अनावश्यक खर्च करने से ऋणग्रस्तता बढ़ जाती है जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति शराब की ओर उन्मुख होता है।
18. **अपर्याप्त बुनियादी सुविधाएं और संस्थागत व्यवस्थाएं** :– ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी सेवाओं का अभाव है जिसके कारण व्यक्ति को अत्यधिक खर्च कर अन्यत्र सुविधाएं जुटाना पड़ता है। वहां पर संस्थागत व्यवस्थाओं का अभाव भी है।
19. **कृषि उत्पादों की उच्च लागत** :– किसानों को खेती करने में अधिक मूल्य पर कृषि उपकरण, कीटनाशक दवाई, रसायनिक खाद एवं अधिक मूल्य पर मजदूर प्राप्त होते हैं।

भारत में ऋणग्रस्तता के परिणाम

1. **दरिद्रता** :– भारत में छोटे और सीमांत किसानों की बढ़ती कंगाली के लिए बढ़ती ग्रामीण ऋणग्रस्तता अत्यधिक जिम्मेदार है।
2. **ब्याज की हानि** :– छोटे किसानों की खेती में रूचि धीरे–धीरे कम होती जा रही है क्योंकि कर्ज के कारण साहूकारों द्वारा उनकी अधिकांश उपज छीन ली जाती है।
3. **संकट बिक्री** :– कर्ज में डूबे छोटे किसान अपनी उपज बेहद न्यूनतम कीमत पर बेचने को मजबूर है।
4. **बंधुआ मजदूरी** :– ऋणग्रस्तता भूमिहीन मजदूरों और किरायेदारों का एक ऐसा वर्ग बनाती है जिनके पास जमींदारों और साहूकारों को भुगतान करने के लिए बहुत कम या कुछ भी नहीं होता है और वे जमींदारों के बंधुआ मजदूर बन जाते हैं। इन सब के भारत में प्रत्यक्ष सामाजिक परिणाम है।
5. **खराब आजीविका** :– बढ़ती ग्रामीण ऋणग्रस्तता ने ब्याज सहित ऋण चुकाने की समस्या बढ़ा दी है जिससे किसानों को खराब आजीविका अपनाने के लिए मजबूर होना पड़ता है।
6. **भूमी का हस्तांतरण** :– कर्ज के बढ़ते बोझ ने किसानों को अपनी जमीन साहूकारों और महाजनों को बेचने के लिए मजबूर कर दिया है और इस तरह भूमिहीन खेतिहर मजदूर बन गये हैं।
7. **बुरा सामाजिक प्रभाव** :– बढ़ती ऋणग्रस्तता आमतौर पर समाज को अमीर और गरीब में विभाजित कर देती है जिससे समाज में वर्ग संघर्ष बढ़ जाता है।
8. **सूदखोरों द्वारा शोषण** :– सूदखोरों द्वारा अत्यधिक ब्याज दर पर ऋण दिया जाता है जिसके परिणामस्वरूप कई गुना पैसा वसूल कर ग्रामीणों का शोषण किया जाता है।
9. **सामाजिक विघटन** :– ऋणग्रस्तता के कारण ग्रामीणों में आत्महत्या की दर बढ़ रही है और अपराध में वृद्धि हो रही है।

भारत में ऋणग्रस्तता पर नियंत्रण हेतु किये गये प्रयास

1. **पुराने ऋण का निपटान** :– देश के छोटे किसानों पर मौजूद पैतृक ऋण और संस्थागत ऋण सरकार द्वारा समय–समय पर योजना बनाकर माफ किया जाना चाहिए।
2. **साहूकारों पर निर्भरता कम करना** :– साहूकारों पर किसानों की निर्भरता कम करने के लिए सहकारी समितियों, वाणिज्यिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों आदि से युक्त संस्थागत ऋण नेटवर्क का विस्तार किया जाना चाहिए।
3. **नये ऋणों का नियंत्रण** :– ऐसे में उचित कदम उठाए जाने चाहिए ताकि किसानों को गैर उत्पादक उद्देश्यों के लिए उधार का सहारा न लेना पड़े। इस प्रकार विवाह और जन्मोत्सव के उत्सवों के लिए अनुत्पादक ऋण से पूरी तरह बचना चाहिए। उचित शिक्षा और प्रचार –प्रसार करके सरकार देश के किसानों को इस संबंध में जागरूक बनाने में मदद कर सकती है।
4. **साहूकारों पर नियंत्रण** :– ग्रामीण ऋणग्रस्तता के बढ़ते खतरों को नियंत्रित करने के लिए साहूकारों की गतिविधियों को नियंत्रित किया जाना चाहिए। इस

बीच, विभिन्न राज्य सरकारों ने साहूकारों के लिए अपना धन उधार कार्यों के लिए लाईसेंस प्राप्त करना और उचित खाते बनाए रखना और उनके द्वारा ली जाने वाली ब्याज दर पर नियंत्रण रखना अनिवार्य बनाने के लिए विभिन्न अधिनियम पारित किए हैं।

5. **भूमि हस्तांतरण की जांच करना :–** किसानों द्वारा ऋण का भुगतान न करने के परिणामस्वरूप गैर–कृषि प्रयोजनों के लिए भूमि के हस्तातंरण पर रोक लगाने के लिए सरकार ने पहले से ही किसानों के हितों की रक्षा के लिए विभिन्न कानून बनाए हैं।
6. **बचत को प्रोत्साहित करना :–** किसानों को नियमित रूप से बचत की आदत अपनाने के लिए भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। सहकारी ऋण समितियां भी इस संबंध में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।
7. राज्य एवं केन्द्र सरकार द्वारा ऋण माफी समय–समय पर की जाती है।
8. वित्तीय एवं साख ऐजेंसियों का विकास किया जा रहा है।
9. लघु किसान विकास अभिकरण कार्यक्रम चलाया जा रहा है।
10. लघु वित योजना, स्वयं सहायता समूहों को बैंक से जोड़ा गया है।
11. सन् 1985 में विस्तृत फसल बीमा योजना लागू की गई है।
12. सन् 1998 में किसान क्रेडिट कार्ड कार्यक्रम प्रारंभ की गई है।
13. सन् 2000 में राष्ट्रीय कृषक आयोग का गठन किया गया है।
14. सन् 2000 में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना लागू की गई है।
15. सन् 2004 में कृषि क्षेत्र आय बीमा योजना लागू की गई है।
16. ग्रामीण निर्धनता एवं भूमिहीन श्रमिकों के आर्थिक उत्थान हेतु मनरेगा योजना सन् 2006 में प्रारंभ किया गया है।
17. भारत सरकार द्वारा गरीबों को मुफ्त अनाज का वितरण सन् 2029 तक किये जाने की योजना है।

निष्कर्ष

1. वे मुख्य तथ्य जो कृषकों को ऋण लेने को बाध्य करने के लिए उत्तरदायी है वे अब भी उतनी तीव्रता से अपना कार्य करते हैं। इसमें यदि कुछ अपवाद है तो वह है कुछ बड़े कृषकों का वर्ग। भारतीय सरकार की आर्थिक और सामाजिक नीतियां, जिनका दिग्दर्शन योजनाओं तथा कल्याणकारी कार्यों के लिए हुआ है जहां साहूकार तथा ऋणियों एवं धनी तथा निर्धन प्रतिस्पर्धियों के मध्य गलाघोंट संघर्ष अत्यंत भयंकर रुप से चलता रहता है। कृषकों में अधिकतर लोग कृषि का कार्य छोटे–छोटे खेतों पर करते हैं। जिनसे बुद्धिमान एवं चतुर किसान भी निर्वाह मात्र से अधिक नहीं उत्पन्न कर सकते। ऐसे घाटे के क्षेत्रों पर कार्य करने वाले किसानों को ऋण का भार भी वहन करना पड़ता है। कृषक को इस ऋण भार से मुक्त करने के लिए ढांचे में ऐसे आमूलचूल परिर्वतन करने की जरुरत है। जिसका उद्देश्य बर्बादी के मुख्य कारण को दूर करना और उसके परिणामस्वरुप लाभ की मात्रा पर कार्य करने वाले कृषकों की ऋणग्रस्तता को हटाना हो। इसका अर्थ यह हुआ कि लाभ से प्रभावित बाजार यंत्र से जुड़ी हुई उत्पादन की समस्त प्रक्रिया को मूल्यों के चढ़ते–उतरते भंवरजाल से मुक्त कराते हुए इसे सुनियोजित संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के एक अंग के रुप में उसे परिवर्तित करना होगा।

2. कानूनी तथा अन्य उपाय न केवल प्रभावहीन ही सिद्ध हो रहे हैं। बल्कि ये ऐसा प्रभाव उत्पन्न कर रहे हैं जो धनी वर्ग की शक्ति बढ़ा रहे हैं और उनको अधिकाधिक अनैतिक बना रहे हैं तथ कानूनों को बिना हिचकिचाहट के तोड़ने में प्रोत्साहित कर रहे हैं। यह शक्तिशाली वर्ग प्रत्येक वस्तु को छोटे–छोटे लाभ की मात्रा पर कार्य करने वाले कृषकों एवं कृषि श्रमिकों के हितों का हनन करते हुए उन्हें अपने लाभ में परिवर्तित कर देता है। वर्तमान शासन कृषकों को पर्याप्त मात्रा में ऋण देने की व्यवस्था करने में असमर्थ सिद्ध हुआ है।
3. ग्रामीण विकास के कार्यक्रम में कृषि के लिए पर्याप्त मात्रा में पूंजी जुटाना एक अत्यंत दुष्कर कार्य समझा जाता है। किसानों की उत्पादकता में सुधार करने के लिए आवश्यक साधन प्राप्त करने योग्य बनाया जाये और आज देश की घाटे की कृषि अर्थव्यवस्था में इसीलिए ऐसी ऋणदान प्रणाली की आवश्यकता है जो विभिन्न उत्पादक कार्यों के लिए विशेष रुप से उपयुक्त सिद्ध हो।
4. किसानों को फसल उत्पादन के अतिरिक्त अन्य उत्पादक कार्यों हेतु भी ऋण प्रदान किया जाना उत्तम होगा।
5. कृषि साख समितियों, भूमि बंधक बैंक तथा अनुसूचित जाति बैंक द्वारा बनाए नियमों को और लचीला बनाना अत्यन्त शुभ होगा।
6. कृषि की उन्नती एवं ऋणग्रस्तता की समाप्ति हेतु ग्रामीणों को कृषि एवं औद्योगिक कुशलता के प्रशिक्षण दिए जाने आवश्यक है।
7. कृषि सहायक उद्योगों एवं अन्य कुटीर उद्योग–धंधों को ग्रामीण क्षेत्र एवं ग्रामीण सीमाओं पर स्थापित किया जाना अच्छा होगा।
8. कृषकों को कृषि की लाभकारी उत्पादकता बढ़ाने हेतु कौशल कार्यक्रमों से चलाया जाए।
9. ग्रामीण क्षेत्रों में बचत योजनाओं को आन्दोलन के रूप में चलाया जाना अति उत्तम हो सकता है।
10. साहूकारों, महाजनों एवं सूदखोरों पर नियन्त्रण लगाने के लिए कोई ठोस नीति का निर्धारण किया जाना चाहिए।
11. सहकारी समितियों से जुड़े आन्दोलनों को कृषक हित में शुरू किया जाना श्रेष्ठ होगा।
12. कृषकों पर पीढ़ी दर–पीढ़ी चले आ रहे अर्थात् पैतृक ऋणों में माफी दी जाना अत्यन्त अच्छा हो सकता है।
13. ग्रामीण कृषकों को अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, भाग्यवादिता, अकर्मण्यता आदि पृवृत्ति को स्वयं दूर करने के लिए कार्यक्रम चलाना भी श्रेष्ठ हो सकेगा।
14. किसानों में यह अलख जगानी होगी कि आय और श्रम की महत्ता के बिना कोई भी कार्य संम्भव नहीं हो सकता।
15. सरकार द्वारा सुविधाजनक परिस्थितियों में कम ब्याज दरों पर ऋण उपलब्ध कराना अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हो रहा है।
16. सहकारी समितियों की स्थापना किसी एकमात्र उदेश्य के लिए ही सीमित न हो वरन बहुउद्देश्यीय नीति लाभकारी होगी।
17. ग्राम पंचायत व्यवस्था के अंतर्गत ग्रामों में परस्पर सहयोग सामंजस्य एवं सौहार्द की स्थापना करने का लक्ष्य रखा जाना उत्तम होगा।
18. ग्रामों में छोटा परिवार एवं सीमित परिवार होने के उद्देश्य की सार्थकता संबंधी कार्यक्रमों को क्रियान्वित किया जाना उत्तम होगा।

19. सन् 2011 में 6 लोगों के साथ तमिलनाडु का एक छोटा–सा कस्बा तेनकासी में स्टार्टअप शुरू किया गया है। जिससे ग्रामीण क्षेत्र के लोग कृषि के साथ–साथ स्टार्टअप में जुड़े हैं। इस तरह के स्टार्टअप हमारे देश के कई पिछड़े क्षेत्रों में भी प्रारंभ किया जाना चाहिए ताकि ऋणग्रस्तता से मुक्ति मिल सके।

संदर्भ ग्रंथ

1. देसाई, ए.आर. (2016) ग्रामीण समाजशास्त्र – रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
2. गुप्ता, एम.एल., शर्मा डी.डी. (2013) भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र – साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
3. जैन, पी.सी. (2021) ग्रामीण समाजशास्त्रः भारतीय परिप्रेक्ष्य– रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
4. सिंह, सुखदेव (2016) पंजाब में ऋणग्रस्तता – शोध गंगा।